

नृत्य-रचनाओं में रचनात्मकता, भावपक्ष एवं अन्य तत्व (रायगढ़ घराने के विशेष संदर्भ में)

यास्मीन सिंह

कथक नृत्यांगना, रायगढ़ घराना, पी-एच.डी. स्कॉलर

राजा चक्रधर सिंह ने कथक नृत्य की परम्परागत नृत्य-रचनाओं और बोल-बंदिशों में अनेक प्रयोग किये। फलस्वरूप कथक नृत्य के तकनीकी और प्रायोगिक पक्ष में नयी सम्भावनाओं का सूत्रपात हुआ। देखने में रायगढ़ घराने की रचनायें अन्य घरानों की रचनाओं की ही भाँति दिखती हैं, किन्तु जब इन पर सूक्ष्मता से दृष्टिपात किया जाए, तो ज्ञात होता है, कि राजा साहब ने परम्परा, संस्कृति, तकनीक, शब्द, भाषा, सिद्धान्त और प्रयोग के साथ-साथ प्रकृति का अंतर्सम्बन्ध स्थापित किया। अक्षर, अक्षर से शब्द, शब्दों से निकलने वाली ध्वनि, ध्वनि का ताल व लय के अनुरूप प्रयोग आदि विविध तथ्य हैं, जो कथक नृत्य के इस युवा घराने की शैली को रोमांचकारी बना देते हैं।

संगीत में 'रचना' शब्द का विशेष महत्व है। गायन, वादन और नृत्य तीनों ही विधाओं में 'रचना' शब्द प्रयुक्त होता है। प्रचलन अथवा व्यवहार में 'रचना' शब्द के बहुत से पर्यायवाची शब्द और अर्थ भी हैं। 'रचना' शब्द का एक आशय 'काव्य' या 'कविता' या 'पद्य' से है तो दूसरी ओर 'रचना' शब्द का एक अर्थ गद्य से भी है। 'रचना' शब्द के विभिन्न अर्थों में से एक अर्थ 'सृजन करना' या 'सृष्टि करने' से भी है। इसी प्रकार किसी विधा-विशेष या कार्य विशेष में किये गये नवीन प्रयोग को 'रचनात्मक' या 'रचनात्मकता' कहा गया है, जो कि पूर्णतः प्रयोगात्मक अर्थ में प्रयुक्त होता है। संगीत में 'रचना' शब्द को 'बंदिश' के अर्थ में भी ग्रहण किया जाता है, किन्तु फिर भी बंदिश का अर्थ रचना शब्द के समानान्तर होते हुए भी भिन्न रूप में महत्व रखता है। इसका कारण यह है, कि बंदिश में राग, ताल और लय का स्पष्ट समावेश अनिवार्य है। अतः बंदिश शब्द संगीत तक सीमित है, किन्तु 'रचना' शब्द की व्यापकता और विस्तार अपेक्षाकृत कहीं अधिक और विशिष्ट है। कवि के काव्य को; किसी चित्रकार के चित्र को; किसी साहित्यकार के लेख को; किसी मूर्तिकार द्वारा बनायी गई मूर्ति को भी 'रचना' ही कहा जाता है। 'रचना' शब्द का पारिभाषिक दृष्टि से अर्थ अत्यन्त व्यापक और सघन हो जाता है। 'रचना' शब्द के उक्त वर्णित किसी भी प्रयोगात्मक स्वरूप पर दृष्टिपात करें, तो इसमें नवीन दृष्टि, आलौकिकता, मनोभाव, प्रयोग, प्रवृत्ति, अन्वेषण, आकर्षण, चमत्कारिकता जैसे लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं।

ललित कलाओं में 'रचना' शब्द सैद्धान्तिक और प्रायोगिक दोनों ही दृष्टि से विशेष स्थान रखता है। इसी सन्दर्भ में नृत्य की बात की जाए, तो इसमें भी सैद्धान्तिक और प्रायोगिक स्वरूप में 'रचना' का समावेश निश्चित रूप से होता है, इसके अतिरिक्त कलाकार अपनी साधना और प्रयोग से नए-नए अन्वेषण के माध्यम से नृत्य में रचनात्मकता को जन्म देता है।

नृत्य की शास्त्रीय परम्परा में वाचिक अभिनय का विशेष महत्व रहा है। कथक नृत्य में भावों की अभिव्यक्ति अर्थपूर्ण शब्दों से युक्त काव्य रूपी नृत्य-रचनाओं के माध्यम से करता है। नृत्य रचनाओं से तात्पर्य भाव पक्ष से है और साहित्य की दृष्टि से देखें तो ऐसे शब्दों का समुच्चय जो काव्य रूप में व्याकरणीय पद्धतियों का अनुसरण करते हों। तुक, छन्द, रस, अलंकारादि से विभूषित अर्थयुक्त शब्दों से सुसंगठित पद रचना जिसे विभिन्न तालों में भिन्न-भिन्न लयों के साथ-साथ पृथक्-पृथक् रागों में निबद्ध कर गायन किया जाता है। गाये जाने वाले ऐसे काव्य पदों को 'गेय पद' भी कहा जाता है, जिस कथकों द्वारा भाव प्रदर्शन किया जाता है।

रायगढ़ घराने की कथक नृत्य के प्रस्तुतिकरण में भाव का विशेष रूप से प्रदर्शन इस घराने के कलाकारों द्वारा किया जाता है। भाव पक्ष में प्रयुक्त होने वाली रचनाओं में प्रायः भजन, वन्दना, गजल, तुमरी, कजरी, चैती आदि प्रमुख हैं। प्रायः इन सभी गीत प्रकारों की रचना राजा साहब द्वारा की गई है। इसके अतिरिक्त गतभाव के माध्यम से भी कथक नृत्य में भाव प्रदर्शन किया जाता है और इसका आधार 'काव्य' है। साहित्य का सबसे मनोहारी और रोमांचित करने वाला अंग 'काव्य' को माना गया है। यही काव्य भिन्न-भिन्न रूपों में लय, ताल व रागों में बंधकर विभिन्न गीत शैलियों को भी जन्म देता है। काव्य का अस्तित्व सर्वथा बहुप्रचलित और सर्वमान्य रहा है। प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में उल्लिखित समस्त बातें काव्य रूप में ही उद्धृत की गई हैं।

पद या काव्य की रचना प्रक्रिया नाट्यशास्त्र में भी प्राप्त होती है। भरत ने वाचिक अभिनय नामक प्रकरण में अक्षरों से शब्दों का संयोजन निरूपित किया है। व्यंजनों में स्वरों के प्रयोग से शब्द निर्मिति की जाती है। परन्तु स्वर और व्यंजन के मेल मात्र से शब्द अर्थ को प्राप्त नहीं होते, उनमें अन्य व्याकरणीय तत्वों का भी समावेश होना अनिवार्य है। जैसा कि भरत कहते हैं—

“एभिर्व्यनिर्वर्गेनामाख्यातोपसर्गविनिपातैः।

तद्धितसन्धिविभक्तिभिरधिष्ठितः शब्द इत्युक्तः॥”¹

तात्पर्य यह है, कि स्वर और व्यंजनों के साथ-साथ क्रिया धातु (आख्यात), संज्ञा, उपसर्ग, निपात, तद्धित, सन्धि तथा विभक्ति नामक तत्वों के प्रयोग से ही शब्द अधिष्ठित होता है। इसके पश्चात् शब्दों को अर्थ के अनुरूप प्रयोग से अथवा मेल से वाक्य बनते हैं, जो दो प्रकार के हैं— निबद्ध और चूर्णपद। चूर्णपद का संबंध गद्य से है, जबकि ‘निबद्ध’ पद्य रचना हेतु निश्चित किया गया है। पद्य से तात्पर्य काव्य से है। काव्य रचना करते समय जिन बातों का विशेष ध्यान रखना अनिवार्य है, उनका उल्लेख भी भरत द्वारा किया गया है। वे कहते हैं, कि काव्य में पद और अक्षरों का निश्चित क्रम के अनुसार गठन होना चाहिए। ‘यति’ अर्थात् विच्छेद से समन्वित तथा अक्षरों की संख्या भी निश्चित प्रमाण में होनी चाहिए। ऐसे ही काव्य को ‘निबद्ध’ कहा जाता है—

“निबद्धाक्षरसंयुक्तं यतिच्छेदसमन्वितम्।

निबद्धन्तु पदं ज्ञेयं प्रमाणनियतात्मकम्॥”²

प्राचीन विद्वानों एवं आचार्यों ने काव्य के आधार पर सौन्दर्य को परिभाषित किया है। कथक नृत्य की विभिन्न रचनाओं को काव्य का ही स्वरूप स्वीकार किया जा सकता है। ‘कथक की रचना प्रक्रिया में देह की नृत्यमय संरचना जहाँ अपनी शास्त्रीय संरचना पूर्ण करती है वहीं जिन कई अन्य कल्पनाओं को साकार करती है, उनमें एक है काव्य। किन्तु यह भी नहीं कहा जा सकता कि काव्य केवल कथक की ही प्रेरणा से उदित हुए हैं। काव्य केवल कृति हृदय की सृजना है।³

रचना का संबंध साहित्य से ही होता है, किन्तु रचनात्मकता का संबंध कलाओं से है। मनुष्य के मस्तिष्क में जन्म लेने वाली कल्पना ही रचनात्मकता को जन्म देती है। किसी कवि द्वारा रचित किसी काव्य को ताल—लय व रागबद्ध कर गायक उसमें रचनात्मक प्रयोग कर उसे प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार नर्तक उसी रचना को स्वयं की मानसिक संवेदनाओं और रचनात्मकता के माध्यम से अभिनय, भाव एवं आंगिक चेष्टाओं के माध्यम से मंच पर प्रस्तुत करता है। इस प्रकार एक ही रचना को अलग-अलग व्यक्ति अपनी-अपनी कल्पना के माध्यम से विविध रूपों में ढाल लेते हैं। यहाँ अन्तर मात्रा काव्य के रचनात्मक प्रयोग का है।

काव्य शब्दों का सौन्दर्य है। शब्दों का सृजन है। शब्दों का अलंकरण भावनाओं की रंग-रेखायें, खुशबू सभी कुछ दे जाता है। कविता में शब्द पहले अनुभूति जगाते हैं। भावनाओं की रेखायें, चित्र व गतियाँ उसके बाद बनती हैं। इसी कारण कहा गया है— **‘वाक्यं रसात्मकं काव्यं’**। जिन वाक्यों में रस होता है काव्य कहलाते हैं।

‘जब हम वस्तु को उसी भावनात्मक दृष्टिकोण से देखने लगते हैं, जैसे कोई कवि उसे देखता है, तो हमारा उस वस्तु से साधारणीकरण होता जाता है। रसानुभूति हमें मायावी आवरण से ऊपर उठकर विभिन्न रूपों के साथ तादात्म्य स्थापित करा देती है। हम परमानन्द की अनुभूति करने लगते हैं। रस सिद्धान्त काव्य को भी इसी उच्च परिप्रेक्ष्य में देखता है।’⁴

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काव्य में आलंबन को ही मुख्य माना है। उन्होंने लिखा है— ‘यदि कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों को अपने शब्द-चित्र द्वारा सामने उपस्थित कर दिया जिनसे श्रोता या पाठक के भाव जागृत होते हैं, तो वह एक प्रकार से अपना कार्य कर चुका। रस मग्न पाठक के मन में यह भेदभाव नहीं रहता कि यह अवलम्बन मेरा है या दूसरे का, थोड़ी देर के लिए पाठक या श्रोता का हृदय, लोक का सामान्य हृदय हो जाता है। उसका अपना अलग हृदय नहीं होता।’⁵ इस प्रकार अभिनय के माध्यम से चित्तवृत्तियों का विभावन कराने वाले आधार को विभाव कहते हैं। शारीरिक अंग, प्रत्यंग के संचालन द्वारा भाव की उद्दीप्त या जागृत करने की चेष्टा ही विभाव है। विभाव पक्ष के ही अंतर्गत हम उन सब प्रस्तुत वस्तुओं और व्यापारों को भी लेते हैं, जो हमारे मन में सौन्दर्य, माधुर्य, दीप्ति, कांति, प्रताप, एश्वर्य, विभिन्न इत्यादि की भावनायें उत्पन्न करते हैं। अनुभूति या भावना ही काव्य का प्रेरक तत्त्व है उसकी मूलभूत सत्ता है।

उक्त अध्ययन में रचना, रचनात्मकता, भाव, सौन्दर्य, काव्य और साहित्य की चर्चा की गई है, जिसमें सभी तथ्य एक-दूसरे से प्रभावित होने के साथ-साथ एक-दूसरे की उत्पत्ति का कारण भी प्रतीत होते हैं, जो

सीधे तौर पर मानव मस्तिष्क से जुड़े हुए हैं। अतः रचनाकार की कल्पना ही काव्य रूपी रचनाओं को जन्म देती है और वही रचनायें विषयानुरूप या विधा के अनुसार रचनात्मक आयाम प्राप्त करती हैं। नन्ददुलारे बाजपेयी के मतानुसार— 'कल्पना अनुभूति का क्रियाशील रूप है...कल्पना का मूलस्रोत अनुभूति है और उसकी परिणति है— काव्य की रूपात्मक अभिव्यंजना।'⁶

रायगढ़ घराने की रचनाओं की दृष्टि से यदि देखा जाये, तो यही रचनात्मकता सौन्दर्य की निर्मिति है, जो भावों को जन्म देती है और तभी रस की निष्पत्ति होती है। एक कलाकार का अंतिम पड़ाव परम आनंद की अनुभूति करना ही है, जिसके लिए उसे नित नए रचनात्मक प्रयोग करने पड़ते हैं। कलाकार अपनी बुद्धि, कौशल, कल्पना और प्रयोगशीलता से एक विषय को अलग-अलग रूप-स्वरूप में प्रस्तुत कर सकता है अथवा करता है। कलाकार का यही रचनात्मक स्वभाव उसे अन्य कलाकारों से पृथक् भी करता है। रायगढ़ नरेश राजा चक्रधर सिंह द्वारा रचित विभिन्न रचनाओं में उक्त सभी तथ्यों का समावेश समानता से देखा जा सकता है, इसीलिए इस घराने के कथक नृत्य में प्रयोग की एवं रचनात्मकता की असीमित संभावनायें भी व्याप्त हैं।

रायगढ़ घराने की कथक नृत्य शैली के भावपक्ष में जिन रचनाओं पर नृत्य किया जाता है, वे काव्य शास्त्र के अनुरूप होने के साथ-साथ सौन्दर्यशास्त्र के प्रतिमानों पर भी उतने ही प्रमाणित सिद्ध होते हैं। कथक नृत्य में प्रयुक्त होने वाली काव्य रचनायें भजन, भावगीत, वन्दना, गज़ल, ठुमरी के रूप में प्रयुक्त होती हैं। ये रचनायें भरत द्वारा निर्दिष्ट निबद्ध काव्य के अनुरूप होती हैं। भरत द्वारा बताया गया निबद्ध मूलतः पद्य के संदर्भ में है, जबकि संगीतशास्त्र के अनुसार निबद्ध से तात्पर्य उस रचना या बंदिश से है, जो राग, लय, ध्वनि, ताल आदि तत्वों से परिपूर्ण हो तथा एक निर्धारित प्रारूप में गायन योग्य हो, वही निबद्ध है। भरत ने जिस निबद्ध पद्य रचना का निर्देश दिया है, वह छन्द, अलंकार, सन्धि, समास आदि तत्वों से परिपूर्ण है।

भरत ने काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर कहा है। चूँकि काव्य और संगीत दोनों के पृथक्-पृथक् शास्त्र हैं, अतः रचना और प्रयोग की दृष्टि से यह अन्तर स्वाभाविक भी है और आवश्यक भी। किन्तु जब काव्य, गायन रूप में कथक नृत्य में समाहित होता है, तो वह नृत्य के अनुरूप एक नये स्वरूप में पुनः परिवर्तन हो जाता है। इसका कारण यह है, कि काव्य और गान-कला श्रव्यात्मक है, जबकि नृत्य 'दृश्यात्मक'। अतः गायक कलाकार काव्य में निहित शब्दों को गायन रूप में उच्चारित (अथवा गायन) करता है, तो कथक नर्तक उन शब्दों में निहित भावों को आंगिक अभिनय एवं भाव-भंगिमाओं द्वारा दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस संबंध में विद्वानों का मत है, कि— 'कथक सौन्दर्य केवल कथक शास्त्र तक ही सीमित नहीं। इसकी गति से छनकर बनते हैं काव्य के छंद, शब्दों का अंकन व रंग रेखाओं से बने चित्रात्मक व शिल्पगत आकृति। नृत्य का सौन्दर्य प्रेरणास्रोत भी है। एक चित्रकार, एक मूर्तिकार, एक कवि की प्रतिभा के लिए और हर उस व्यक्ति के लिए भी जो कलाकार नहीं है।'⁷

कथक नृत्य के भाव पक्ष में 'स्वरात्मक' शब्दों का प्रयोग किया जाता है। स्वरात्मक से आशय— वह काव्य जो सार्थक शब्दों से युक्त हो, स्वरों से आबद्ध हो, ताल और लय पर आश्रित हो तथा भाव से परिपूर्ण हो, से है। रायगढ़ की कथक नृत्य शैली में प्रयुक्त होने वाले गीत-प्रकारों को यदि संगीत (गायन) शास्त्र की दृष्टि से देखा जाए, तो इसमें विभिन्न तत्वों का समावेश होता है। इन तत्वों में स्वर, सप्तक, अलंकार, वर्ण, राग व रागांग, मीड, खटका, कण, मुर्की आदि तत्व उल्लेखनीय हैं। प्राचीन संगीताचार्यों ने उक्त वर्णित सभी तत्वों में सर्वप्रथम स्थान 'नाद' को दिया है। आचार्य मतंग के अनुसार—

"न नादेन विना गीतं न नादेन विना स्वराः।

न नादेन विना नृत्तं तस्मान्नादात्मकं जगत्॥"⁸

अर्थात् नाद के बिना न गीत, न स्वर और न ही नृत्त है। अतएव यह सम्पूर्ण जगत् ही नादमय है। आचार्य शार्ङ्गदेव ने भी नाद के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए उल्लेख किया है, कि—

"गीतं नादात्मकं वाद्यं नादव्यक्त्या प्रशस्यते।

तद्द्वयानुगतं नृत्तं नादाधीनमतस्त्रयम्॥

नादेन व्यज्यते वर्णः पदं वर्णात्पदाद्वचः।

वचसो व्यवहारोऽयं नादाधीनमतोजगत्॥"⁹

अर्थात् गीत, वाद्य और नृत्त (नृत्य और नृत्त) तीनों ही नाद के अधीन हैं। भाषाओं का उद्गम भी नाद से ही सम्भव है। नाद से अक्षर, अक्षर से शब्द, शब्द से वाक्य और वाक्यों से पूरा भाव व्यक्त किया जाता है। नाद के लिए अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है, यथा— स्वर, शब्द, ध्वनि, आवाज़ आदि। डॉ.

तेजसिंह टाक के अनुसार— “संगीतोपयोगी नाद को ही ‘स्वर’ कहा जाता है।”¹⁰ अतः कोई भी गीत नादात्मक ही होता है।

कथक नृत्य के भाव पक्ष की रचनाओं में निहित उक्त वर्णित तत्वों के अतिरिक्त गायन और वादन दोनों में ताल वाद्यों की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। शास्त्रों में चार प्रकार के वाद्य— घन, अवनद्ध, तार और सुषिर, बताये गये हैं। गायन एवं नृत्य में ताल वाद्य के रूप में घन और अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। कथक नृत्य में प्रस्तुतिकरण के समय घन वाद्य के रूप में ‘घुँघरू’ तथा अवनद्ध वाद्य के रूप में प्रायः तबला या पखावज का प्रयोग बहु-प्रचलित है। इसके साथ-साथ तार वाद्यों में सारंगी, सितार, वायलिन तथा सुषिर वाद्यों में बाँसुरी का प्रयोग विशेष रूप किया जाता है। उल्लेखनीय है, कि घन और अवनद्ध वाद्य जहाँ ताल को दर्शाते हैं तथा नर्तक इनका अनुकरण करता है वहीं तार और सुषिर वाद्य गायक कलाकार का अनुकरण करते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण प्रस्तुति में गायन और वादन का अनुकरण करते हुए नर्तक भाव पक्ष की सुन्दर प्रस्तुति देता है। यहाँ तीनों ही विधायें अपने-अपने स्थान में विशिष्ट हैं। चूँकि गायन और वादन मूलतः कथक नृत्य हेतु प्रयुक्त होते हैं, अतः नृत्य को प्रमुखता दी जाती है।

कथक नृत्य में गायन और वादन के साथ प्रस्तुतिकरण के सम्पूर्ण सौन्दर्य हेतु यद्यपि उपर्युक्त सभी विधायें और उनके सभी तत्वों का महत्व एकीकृत रूप में होता है तथापि रचनाकार की रचनाओं या पदों में निहित भाव से प्रस्तुतिकरण और भी अधिक आकर्षक और आनन्द प्रदान करता है। रायगढ़ नरेश चक्रधर सिंह द्वारा कथक नृत्य के सादृश्य ऐसी अनेक दुमरियाँ, गज़ल, खमसा, भाव पद आदि की रचना की गई हैं, जिसमें काव्य का अर्थपूर्ण सौन्दर्य, गायन का अद्भुत आकर्षण, ताल वाद्यों का अनुशासन और अभिनय पक्ष की संवेदनाओं का प्रभाव परिलक्षित होता है। राजा साहब भाव प्रधान रचनायें ‘चक्रप्रिया’ तथा उर्दू में ‘फ़रहत’ नाम से किया करते थे। राजा साहब द्वारा रचित कुछ भाव प्रधान रचनायें निम्नानुसार हैं—

नवरस पर आधारित दुमरी

गोरी सलोन तोरे नैना, नवल मदमाते हंसत हैं।

तान-तान के तीर चलावे, अजब गजब के सैना।

रौद्र रूप बिरहा की चोटन, नरक भयो है ऐना।

रोय मरत हैं तोरे सनेही, हिय डार पावे मैना।

‘चक्रप्रिया’ अब प्रेमी तिहारो, बकत बैरागी बैना।

राजा साहब द्वारा रचित उक्त दुमरी जहाँ एक ओर कथक नृत्य में प्रस्तुति की दृष्टि से उत्कृष्ट है, वहीं काव्य शास्त्रीय परम्परा का पूर्ण रूप से पालन भी करती है। राजा साहब में रचना तुक, छन्द, भाषा, अलंकार आदि सभी तत्वों पर विशेष रूप से ध्यान दिया है। प्रस्तुत रचना ब्रज भाषा में रचित है। पद में ‘सैना’, ‘ऐना’, ‘मैना’ और ‘बैना’ में दिया गया तुकान्त काव्य की शोभा बढ़ा रहा है। इसी प्रकार अंतिम पद में ‘बकत बैरागी बैना’ में अनुप्रास अलंकार झलक इस काव्य खण्ड को आकर्षक बना रही है। पद ‘चक्रप्रिया’ मुद्रा प्रयुक्त हुई है, जो रचनाकार की है। इसके साथ-साथ उन्होंने रचना में सभी नौ रसों का समावेश भी बड़ी ही कुशलता से किया है। रचना का प्रत्येक खण्ड एक रस का प्रतिनिधित्व करता है।

राग - खमाज, ताल - अब्दाताल

स्थाई

ग	म	प	प	धनि	पध	नि	निरं	सां	-	-	प	निध	पध	म	ग
गो	S	री	स	लोऽ	नीऽ	तोऽ	रेऽ	नै	S	S	S	SS	SS	ना	S
ग	म	ध	ध	ध	ध	-	ध	-	ध	ध	निध	पधनिसां	पध	म	ग
न	व	ल	म	द	मा	S	त	S	हँ	स	तऽ	SSSS	SS	है	S
०				३				x				२			

गोरी सलोन तोरे...

अन्तरा - 1

ग	म	प	प	-	प	ध	-	प	-	प	ध	म	धप	म	ग
ता	S	न	ता	S	न	के	S	ती	S	र	च	ला	SS	वे	S
ग	म	ध	ध	ध	-	निध	पधनिसां	नि	-	नि	धप	म	पध	म	ग
हि	य	ड	र	पा	S	वैS	SSSS	मैं	S	ना	SS	S	SS	S	S

प	-	गं	रें	गं	सां	गं	-	रें	-	मं	गं	सां	(सां)	नि	-
रो	S	ये	म	र	त	हैं	S	तो	S	रे	स	ने	S	ही	S
ग	म	ध	ध	ध	ध	निध	पधनिसां	नि	नि	नि	धप	मध	पध	म	ग
अ	ज	ब	ग	ज	ब	कीS	SSSS	S	सै	ना	SS	SS	SS	S	S
०				३				x				२			

गोरी सलोने तोरे...

अन्तरा - 2

ग	म	प	प	-	प	ध	प	प	-	प	ध	म	धप	म	ग
रौ	S	द्र	रु	S	प	बि	र	हा	S	की	S	चौ	SS	ट	न
ग	म	ध	ध	ध	-	निध	पधनिसां	नि	-	नि	धप	निध	पध	म	ग
न	र	क	भ	यो	S	हैS	SSSS	ऐ	S	ना	SS	SS	SS	S	S
प	-	नि	सां	गं	-	गं	गं	रें	-	मं	गं	सां	(सां)	नि	-
च	S	क्र	पि	या	S	अ	ब	प्रे	S	मी	ति	हा	S	रो	S
ग	म	सां	ध	ध	-	निध	पधनिसां	नि	-	नि	धप	धप	मप	म	ग
ब	क	त	बै	रा	S	गीS	SSSS	बै	S	गा	SS	SS	SS	S	S
०				३				x				२			

गोरी सलोने तोरे...

प्रस्तुत बंदिश राग खमाज और अद्धाताल में निबद्ध है, जिसे विद्वानों ने तुमरी अंग का राग माना है। इसलिए इस राग हेतु नियमों में शिथिलता होती है। यह राग अपने इन्हीं गुणों के कारण संगीत जगत में बहुप्रचलित और श्रोताओं को प्रभावित करने वाला राग माना जाता है। इस राग में तुमरी के अतिरिक्त गज़ल, टप्पा आदि उपशास्त्रीय शैलियाँ गायी-बजायी जाती हैं।

प्रस्तुत बंदिश में राग - खमाज में दर्शायी गई स्वर संगतियाँ ली गई हैं। चूँकि यह एक तुमरी है अतः राग खमाज में इसका गायन अत्यन्ध मधुर अनुभूति देता है। बंदिश की उठान नौवीं मात्रा से वादी स्वर गंधार से की गई है, जो कि आकर्षक लगता है। बंदिश के पूर्वांग में रिषभ वर्ज्य है। स्थायी और अन्तरा में

सा - - प, पध म, धप म इस प्रकार मीड का प्रयोग तथा अन्तरा-1 में (सां) खटका लिया गया है।

साथ-ही बंदिश में कुछ स्थानों पर कण स्वरों का प्रयोग विशेष रूप लक्षित होता है। इन सभी अलंकरणों को गायन के समय बंदिश का स्वरूप खिलता है तथा सम्पूर्ण रचना आकर्षक लगती है। राग खमाज के अनुरूप बंदिश के पूर्वांग में रिषभ वर्ज्य है।

उक्त बंदिश को गायक कलाकार अपनी-अपनी रुचि, गायन पद्धति, शैली व कथक नृत्य में भाव युक्त प्रस्तुतिकरण के आधार पर अलग-अलग रागों व तालों में निबद्ध कर इसका गायन कर सकते हैं। यहाँ राजा साहब द्वारा रचित इस तुमरी को प्रयोग के समय इसके सांगीतिक पक्ष के अध्ययन हेतु उदाहरणार्थ दर्शाया गया है। इसी प्रकार राजा साहब द्वारा अष्टनायिका, राधा-कृष्ण के बीच होने वाली विविध शृंगारिक गतिविधियों को तुमरी के रूप सृजित किया है—

अष्टनायिका पर आधारित तुमरी

भूषण बसन सजाये, सहेटवा पै गोरी चली है।
कुंजन कुंजन ढूँढत पिय को, ताकत आस लाये।
अनत रमे मनमोहन कान्हा, अजहूँ पिया नहि आये।
कलह कियो ताको फल पायो, पिय तिज सेध सिधाये।
'चक्रप्रिया' जब आये अचानक, सुख स्नेह सरसाये।¹¹

राजा साहब द्वारा ऐसी ही अनेक रचनायें की गयी हैं, जिनमें भावप्रवणता विशेष रूप से लक्षित होती है। कथक नृत्य में प्रयोग करते समय ये भाव प्रधान रचनायें दर्शकों पर अपनी विशिष्ट छाप छोड़ती हैं एवं उन्हें बाँधकर रखने में सक्षम प्रतीत होती हैं।

निष्कर्षतः कथक के नृत्त-पक्ष और भाव-पक्ष दोनों में ही वाचिक अभिनय के रूप में गीतों के विभिन्न प्रकार और बोल रचनाओं का पढ़न्त किया जाता है। इन दोनों के साथ वादन की भूमिका भी विशिष्ट होती है। गायन और वादन के पक्ष के साथ-साथ कथक नृत्य के वे तत्व भी समानता से सम्मिलित होते हैं, जो सम्पूर्ण प्रस्तुति को भाव-विभोर व आकर्षक बनाने में महति भूमिका निभाते हैं। इन तत्वों में नर्तक द्वारा अंगों का सुन्दरता से प्रस्तुत करना भी महत्वपूर्ण बिन्दु है। इसके साथ-साथ नृत्य के अन्य तत्वों में आहार्य अर्थात् वेशभूषा और अलंकार, जिससे कलाकार के दैहिक सौन्दर्य की वृद्धि होती है। मंच तथा इस पर संगत कलाकारों की उचित व्यवस्था, प्रकाश व ध्वनि यंत्रों की सुनियोजित व्यवस्था, दर्शकों की बैठक व्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण बिन्दु भी प्रस्तुतिकरण को सौन्दर्य और आकर्षण प्रदान करने में सहायक होते हैं। यद्यपि इन सूक्ष्म तत्वों का अध्ययन यहाँ नहीं किया गया है तथापि इनके महत्व और प्रस्तुतिकरण में इनके योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

संदर्भ :

1. शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल, 'भरतमुनि विरचित नाट्यशास्त्रम्', चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, भाग-2, प्रथम संस्करण संवत् 2040, अध्याय-15, श्लोक 21, पृ. 205
2. वही, श्लोक 38, पृ. 212
3. बख्शी, ज्योति, 'कथक अक्षरों की आरसी', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, प्रथम संस्करण 2000, पृ. 214
4. बाजपेयी, डॉ. राजेन्द्र, 'सौन्दर्य', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, तृतीय आवृत्ति 2004, पृ. 153
5. वही, पृ. 155
6. बाजपेयी, नन्ददुलारे, 'रस सिद्धान्त : नये सन्दर्भ', प्रस्तोता - राममूर्ति त्रिपाठी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2010, पृ. 10
7. बख्शी, ज्योति, वही, पृ. 24-25
8. के., साम्बशिवशास्त्री, 'बृहदेशी', महामहिम श्रीसेतुलक्ष्मीमहाराज्ञी शासनेन राजकीय मुद्रणालय, त्रावणकोर, संस्करण 1928, नादोत्पत्तिप्रकरणम्, श्लोक 16, पृ. 2-3
9. एस., पं. सुब्रमण्यम् शास्त्री, 'शार्ङ्गदेवकृत संगीतरत्नाकर', अड्डयार लाईब्रेरी, मद्रास, 1943, प्रथम भाग, प्रथम स्वरगताध्याय, द्वितीय पिण्डोत्पत्तिप्रकरणम्, श्लो. 1-2, पृ. 22
10. टाक, डॉ. तेजसिंह, 'सुबोध संगीत शास्त्र', बेकरॉ आलम फाउण्डेशन, लखनऊ, 2018, पृ. 7
11. महंत, डॉ. भगवानदास माणिक, "कथक रायगढ़ घराना", बी.आर.रिदम्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015, पृ. 146

